मूल्य 1 रूपया

कृषक समाचार

भारत कृषक समाज का मासिक मुख पत्र

वर्ष 56 | अक्तूबर 2011 | अंक 10

समापति का पत्र :

हम सरकार की नीतियों तथा दुर्लभ संसाधनों के गलत आबंटन के कारण चरम खाद्य मुद्रास्फीति और कीमतों में अस्थिरता के समय मे रह रहे हैं। उदाहरण के लिऐ सिर्फ दो मदों पर व्यय को ही लें: राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम और मनरेगा। सरकार की इन दोनों योजनाओं पर संयुक्त खर्च लगभग 1,50,000 करोड़ रूपऐ हो जाएगा। अब कृषि मंत्रालय के बजट पर विचार करें जो कि सिर्फ रू. 15,000 करोड़ है। यह इन दोनों योजनाओं का केवल 10 प्रतिशत है। लगता है कि सरकार लंबी अवधि के लिए कृषि उत्पादकता बढ़ाने के बजाए उपभोक्ताओं के लिऐ कीमतें कम करने को ज्यादा महत्वपूर्ण समझ रही है। पहला उद्देश्य जो कि जनता को सस्ती कीमतों पर सही भोजन उपलब्ध करवाना है वह दूसरे उद्देश्य यानि कृषि उत्पादकता को बढ़ाकर प्राप्त किया जा सकता है। यह बस कृषि अनुसंधान एवं विकास, कृषि बुनियादी ढ़ाँचे और विस्तार सेवाओं में निवेश की दिशा में संसाधनों को पुनः निर्देशित करके प्राप्त किया जा सकता है। मुझे विश्वास है कि कृषि मंत्रालय के लिए रू. 30,000 करोड़ आबंटन के दोहरीकरण से एक स्थिर और सुरक्षित भविष्य के लिए अच्छी शुरूआत कि जा सकती है।

भारत के कुल 85 प्रतिशत किसानों के पास 10 एकड़ से भी कम भूमि है जो कि देश की कुल कृषि योग्य भूमि का 44 प्रतिशत है। भारतीय कृषि योग्य भूमि का 60 प्रतिशत हिस्सा वर्षा सिंचित है। केवल 28 प्रतिशत भूमि को ही एक से अधिक बार बोया जा सकता है। ऐसे क्षेत्रों में रहने वाले अधिकांश छोटे और सीमांत किसानों को संस्थागत कृषि ऋण के लिऐ उपयुक्त नहीं समझा जाता। यह बड़े शर्म की बात है कि यह किसान जो कि कृषि में लगे हैं इन्हें सरकार की राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के तहत सरकार पर निर्भर रहना पड़ता है। योजना आयोग की 5 साल की योजना गलत है। यह समय है 50 साल की योजना तैयार करने का और वो भी क्षेत्रीय आधार पर। भारत की जनता को भोजन की प्रयाप्त मात्रा देने

के लिऐ फसल विविधिकरण एक महत्वपूर्ण घटक है, तथा राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड़ और राष्ट्रीय बागवानी मिशन इस ओर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

भारत कृषक समाज के डॉ० नरेन्द्र राणा ने दिनाँक 30–08–2011 से 01–09–2011 तक डेकाटोर, (अमेरिका) में आयोजित हुऐ 'फॉर्म प्रौग्रेस शो, 2011' में भाग लिया।

अजय जाखड़
अध्यक्ष, भारत कृषक समाज

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

श्री संजीव चोपड़ा, संयुक्त सचिव और राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड़ और राष्ट्रीय बागवानी मिशन के प्रभारी के साथ फॉमर्स फोरम पत्रिका के श्री परंजॉय गुहा ठाकुरता तथा श्री अजय जाखड़ के साक्षात्कार का सार

प्र. कृपया राष्ट्रीय बागवानी मिशन और राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड़ के बीच अन्तर स्पष्ट करें ?

राष्ट्रीय बागवानी मिशन केवल पिछली योजना की अवधि में बना है। उत्तर पूर्वी और हिमालय क्षेत्र के राज्यों में सफलता के पश्चात इसे देश के बाकी हिस्सों में भी मुख्य धारा बनाना था। इस आधार पर राष्ट्रीय बागवानी मिशन की स्थापना की गई।

राष्ट्रीय बागवानी मिशन एक योजना है जिसमें भारत सरकार का 85 प्रतिशत अंश है और बकाया 15 प्रतिशत राज्य सरकार अंशदान करती है। प्रत्येक राज्य सरकार वर्ष के आरंभ में हमें एक स्पष्ट दृश्य (विजन) और महत्व सूचित कर देती है कि संबंधित वर्ष में वे क्या करना चाहती है। इसका अर्थ यह है कि आलू लगाने से लेकर नर्सरी स्थापित करने या फसलोंपरांत प्रबंधन करना है।

राष्ट्रीय बागवानी मिशन और राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड़ के बीच प्रमुख अंतर यह है कि राष्ट्रीय बागवानी मिशन प्राथमिक रूप से राज्य सरकारों के साथ काम करता है। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड़ व्यक्तियों और घरानों के साथ काम करता है। एक प्रकार से यह पूरक है।

अन्य अंतर यह है कि राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड़ एक शीर्ष स्थाई सत्ता है जो सदैव बनी रहेगी किन्तु राष्ट्रीय बागवानी मिशन एक मिशन मोड प्रोग्राम है। यह 12वीं योजना तक है और यदि आवश्यकता हुई तो 13वीं योजना की अवधि तक बना रहेगा और इसके लिए जो सुधार करने की आवश्यकता थी, किए जा चुके होंगे और यह कार्यकम समाप्त हो सकता है। इस मिशन का प्रमुख उद्देश्य फोकस हस्तक्षेप रणनीति तैयार करना है।

प्र. भारतीय कृषि में बागवानी का महत्व, आवंटन और सहयोग ?

न केवल राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड और राष्ट्रीय बागवानी मिशन बल्कि सम्पूर्ण बागवानी क्षेत्र बड़ी मात्रा में और बड़े मूल्य पर कृषि क्षेत्र के रूप में उत्पादन करता है किन्तु भूमि के केवल 1/10 भाग पर। किन्तु सच यह है कि यह नया क्षेत्र है। यह भी सत्य है कि अभी हाल ही के समय में भारत को खाद्य सुरक्षा की चिन्ता थी अतः बागवानी पर बहुत कम ध्यान दिया गया।

कुछ वर्ष पहले सम्पूर्ण क्षेत्र के लिए 700–800 करोड़ रू. का कुल आवंटन था। केवल 11वीं योजना की अवधि में सरकार ने बागवानी क्षेत्र में निधियों को बढ़ा कर 1200 करोड़ रू. किया है। इससे पहले सारा ध्यान चावल, गेहूँ, गन्ना, कपास और तम्बाकू पर था।

इसका कारण यह था कि भारतीय जीवन और खुराक में बागवानी जिंसों का महत्व नहीं था। तब से खरीद शक्ति बढ़ी है भारतीय मध्य श्रेणी के लोगों का जीवन स्तर सुधरा है। इस अंतिम पहलू के कारण ही प्याज़, टमाटर और आलू के मूल्यों में वृद्धि हुई है क्योंकि बहुत से लोग अब इन बागवानी जिंसों का खर्च उठाने में समर्थ है।

प्र. एक वास्तविक विवादास्पद मुद्दा है कृषि पर आर्थिक सहायता का। क्या भारतीय किसानों को उन देशों से अनियंत्रित आयात करने के कारण सुरक्षा है जो अपने किसानों को बड़ी मात्रा में आर्थिक सहायता देते हैं ?

कृषि में निर्यात योग्य अनुमान और आयात योग्य अनुमान होता है। आयातित सेब को भारत में हिमाचल या कश्मीर के सेब से कम मूल्य पर बेचने के लिए विदेशी आर्थिक सहायता बहुत महत्व रखती है जिसमें परिवहन की लागत भी जुड़ती है। हम विदेशी आर्थिक सहायता का कुछ नहीं कर सकते। हम केवल कश्मीर के सेब को आधुनिक कोल्ड चेन के माध्यम से कोचीन और कोलकाता में बेच सकते हैं। लाहोल और स्पीति भारत में सबसे अधिक आलू का उत्पादन करते हैं।

मुख्य बात यह है कि प्रि–कूलिंग पद्धति अपनाई जाए ताकि बाज़ार में सस्ती दर पर उत्पाद उपलब्ध कराए जा सके और हमें विदेशी उत्पाद से चिन्ता नहीं होनी चाहिए जो हमारे नियंत्रण से बाहर हैं। मेरा मानना है कि कश्मीर और हिमाचल के सेबों को उचित राष्ट्रीय दर प्रदान की जाए तो ये सेब किसी भी आयातित सेब से प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं।

यदि मैं अपने उत्पाद को और सस्ता बेचना चाहता हूँ तो बिचौलियों की लागत कम करनी होगी और एक कूल चेम्बर चेन की स्थापना करनी होगी। मैं, विश्व

में किसी भी जिन्स से प्रतिस्पर्धा कर सकता हूँ क्योंकि हमारे पास उत्तम किसान, उत्तम भूमि और उत्तम तकनीक उपलब्ध है।

प्र. सहकारी आंदोलन की सफलता परिवर्तनीय है। आप इसका विकास कैसे सुनिश्चित करेंगे ?

सहकारी संस्थाओं की स्थापना किसान सदस्यों को उनकी आवश्यकता उस समय पूरी करने के लिए की गई थी जब समाज की अन्य संस्थाएं उनकी पूर्ति करने में सक्षम नहीं थी। मानव आवश्यकताओं की पूर्ति विभिन्न संस्थाओं द्वारा की जा सकती है। ये परिवार, गिर्जाघर, मन्दिर या मस्जिद, राज्य या बाज़ार हो सकते हैं।

सहकारी संस्थाओं का महत्व तब मालूम होता है जब बाज़ार, राज्य, परिवार या धार्मिक संस्थाएँ आपकी आवश्यकता को पूरा नहीं करते। उदाहरण के लिए, वर्ष की समाप्ति पर किसानों के पास बहुत सा माल बच जाता है – बाज़ार सही नहीं होता है। राज्य सरकार उनका उत्पाद नहीं खरीदती और परिवार इसे खा नहीं सकता। अतः इस माल के लिए किसी अन्य संस्था की आवश्यकता होती है।

अतीत में, केवल एक एजेंसी ही ऋण देती थी वह थी सहकारी संस्था। इसका मुख्य उद्देश्य स्थानीय सहकारी संस्थाओं की ऋण की आवश्यकताओं को पूरा करना थाः जो कुछ भी गांव में स्वंय इक्कठा किया जा सकता था तो उसका उपयोग करते हुए सहकारी बैंक से उधार लेकर बाकी आवश्यकता की पूर्ति की जाती थी। अब देश भर में बैंकिंग नेटवर्क फैल चुका है, भारतीय स्टेट बैंक अपनी दुरूस्थ शाखा में भी वास्तविक समय के अंदर सकल समाधान का सौदा कर सकता है। सहकारी संस्थाएँ इसका मुकाबला नहीं कर सकती।

सहकारी संस्थाओं की कमजोरी के कुछ मुख्य पहलुओं को इस तथ्य से भी स्पष्ट किया जा सकता है कि अन्य संस्थाओं में उन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विकास कर लिया है और सहकारी संस्थाएँ फालतू की रह गई। पिछले 15 वर्षों से सहकारी संस्थाओं का जो अधिकार क्षेत्र था उसका अर्थ यह नहीं है कि वह उत्तम प्रकार से चलता रहेगा।

सहकारी संस्थाओं की समस्याओं में से एक समस्या यह है कि जब लोग अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के साथ सहयोग करते हैं और उनका हित एक दूसरे से जुड़ा होता है, किन्तु आवश्यक नहीं होता कि यह सदैव चलता ही रहे।

प्र. यह बहस का विषय है कि सरकार कुछ उपाय और विनियम आरंभ कर रही है जो सहकारी संस्थाओं को नियंत्रण में रखेंगे।

मामला यह है कि कुछ सहकारी संस्थाएँ अपनी राशि से कारोबार करती हैं और कुछ सहकारी संस्थाएँ सरकारी धन से कारोबार करती हैं। आप देखिए कुछ संस्थाएँ जैसे राष्ट्रीय कपास परिषद् (एनसीसी) या भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ मर्यादित (नेफेड़) या इफ्को, अनिवार्य रूप ये यह संघ सरकारी कारोबार करते हैं। सरकारी उर्वरक की आर्थिक सहायता 1,00,000 करोड़ रू. से ऊपर है यथाः पूरे रक्षा बजट से भी अधिक। इसका 50 प्रतिशत भाग सहकारी क्षेत्र को जाता है।

यदि किसी क्षेत्र को 50,000 करोड़ रू. की आर्थिक सहायता मिलती है तो उस संस्था पर सरकारी नियंत्रण तो होगा। आत्मनिर्भर सहकारी संस्थाओं के लिए जो सार्वजनिक निधियों का उपयोग नहीं करती उनके लिए विनियमों की आवश्यकता नहीं है। किन्तु अधिकतम बड़ी सहकारी संस्थाएँ सरकारी राशि का उपयोग करती हैं अतः उनके लिए विनियमों का होना आवश्यक है।

प्र. हाँ, किन्तु इफ्को जैसी संस्थाएँ अपने अंशधारकों से ही कारोबार करती हैं। सरकार इस क्षेत्र को आर्थिक सहायता नहीं देती बल्कि किसानों को आर्थिक सहायता देती है। अतः उस संस्था पर विनियम लागू करना उचित नहीं लगता जो सरकारी अंश राशि का उपयोग नहीं करती ?

आप केवल एक उदाहरण इफ्को का दे रहे हैं किन्तु अधिकतम ऐसे संघ हैं जो सरकारी निधियों पर ही जीवित हैं।

प्र. कृप्या बताएँ कि समय बीतने के साथ सहकारी संस्थाओं के हितों में अन्तर क्यों होता है ?

15–20 वर्ष पहले सदस्यों की स्थिति और क्षमताएँ भिन्न थीं और यह अति कठिन हो गया है कि ऐसे निर्णय लिए जाएं जो सभी पार्टियों के पक्ष में हों।

दुग्ध सहकारी संस्थाओं में प्रारंभ में प्रत्येक व्यक्ति ने दो या तीन गायें दी थी, इस प्रकार सभी का समान हित था। 20 वर्ष के पश्चात कुछ किसानों के पास अब लगभग 50 गायें हैं जबकि अन्य के पास केवल एक या दो गायें हैं। इस स्थिति में वे किसान जिनका अंशदान कम है लेकिन उनका भी उतना ही महत्व होगा जितना अधिक अंशदान करने वाले किसानों का सहकारी संस्थाओं के कार्य में है।

सहकारी संस्थाओं के पास ऐसी कोई पद्धति नहीं है जो सौदे पर आधारित निर्णय कर सके। उनकी पद्धति लोकतांत्रिक सिद्धांत पर कार्य करती हैः एक व्यक्ति एक वोट। यदि कोई किसान सहकारी संस्थाओं के उत्पादन में 80

प्रतिशत सहयोग देता है तो उसे उस किसान से अधिक महत्व नहीं दिया जाएगा जो 5 प्रतिशत से कम सहयोग या अंशदान करता है। सच यह है कि जब तक सहकारी संस्थाएँ सौदे पर आधारित निर्णय नहीं करती वे उन लोगों के हाथों की कठपुतली बनी रहेंगी जिनका सहकारी संस्थाओं में कम योगदान है।

प्र. कृप्या कृषि उत्पाद विपणन समिति (एपीएमसी) अधिनियम को स्पष्ट करें और नई दिल्ली की आजादपुर सब्जी मण्डी में संकट के संदर्भ में इसे स्पष्ट करें ?

आजादपुर की एपीएमसी पर 1500 सदस्यों का नियंत्रण है। उन्होंने अब एक कार्टल बना दिया है और वे किसी अन्य को इसमें शामिल करना नहीं चाहते। दिल्ली की प्रमुख समस्या है कि उत्पादन और उपभोक्ता कई गुणा बढ़ चुके हैं किन्तु बहुत समय से बिचौलियों की संख्या नहीं बढ़ी है।

आजादपुर मण्ड़ी की शुरूआत आपातकालीन (1975–1977) में हुई। इस प्रकार आजादपुर और औखला की मण्ड़ियों में इस कारोबार में लोग कई पीढ़ियों से हैं। वे नहीं चाहते कि इस कारोबार में कोई और आए और वे प्रतिस्पर्धा करें। यह भी एक कारण है कि दिल्ली में फल और सब्जियों के मूल्यों में वृद्धि हो रही है।

प्र. आजादपुर से कितना राजस्व मिलता है और प्रतिस्पर्धा की कमी के कारण सरकार को कितनी हानि है ?

किसी विशेष वर्ष में आजादपुर के संबंध में रिपोर्ट है कि थोक कारोबार में 7990 करोड़ रू. के फल एवं सब्जियों औसतन प्रत्येक वर्ष दिल्ली में बेची जाती है। यह असम्भव है। मेरा अनुमान है कि आंकड़े इससे 15 से 20 गुणा अधिक होने चाहिए। इसका अर्थ है कि (क). सभी सौदों का उल्लेख नहीं होता और पारदर्शिता नहीं है और (ख). दिल्ली सरकार बड़ी मात्रा में राजस्व की हानि उठा रही है। एपीएमसी लगातार बल देती है कि मण्डी में आपका स्थान होना चाहिए ताकि उत्पादों की बिकी की जा सके।

विश्व की लगभग सभी मण्ड़ियों में वास्तविक नीलामी समाप्त हो चुकी है। होना यह चाहिए कि जो माल दिल्ली में आए उसे इलेक्ट्रानिक कारोबार के माध्यम से खुली नीलामी प्लेटफार्म पर रखा जाए। ऐसा करने पर जो कोई व्यक्ति सौदा करना चाहेगा वह अपने कम्पयूटर से कहीं भी बैठे हुए सौदा कर सकता है।

प्र. मण्ड़ियाँ राज्य सरकार के क्षेत्राधिकार में आती हैं। नई दिल्ली ही इस मामले में कुछ कर सकती हैं ?

एपीएमसी अधिनियम की शुरूआत गैर – विनाशशील जिन्सों के कारोबार के लिए की गई थी जहाँ इस बात की सम्भावना होती है कि जिस माल की तुरंत

बिक्री नहीं हो पाती उसे मण्डी में बाद में बेचा जा सकता है। किन्तु गैर विनाशशील जिन्सों की किसानों को तुरंत बिक्री करनी होती है। एपीएमसी अधिनियम को 1960 के दशक में तैयार किया गया ताकि किसानों को बिचौलियों से बचाया जा सके। उस समय आधुनिक संचार तकनीक नहीं थी किन्तु अभी तक सामंती प्रथा विद्यमान थी किन्तु अब उसमें परिवर्तन हो गया है और लोकतंत्र, जनसंख्या, सूचना तकनीक, संचार सुविधा ने सारा परिदृश्य बदल दिया हैं। इससे छुटकारा ही उत्तम विकल्प है। कुछ राज्यों में जैसे बिहार और केरल में यह किया जा चुका है। अगला उत्तम विकल्प यह है कि उसमें सुधार किया जाए और कॉर्पोरेट सेक्टर को अनुमति दी जाए कि वे अपनी मण्ड़ियाँ स्थापित करें।

प्र. भारतीय कृषि के कथित निगमीकरण पर बड़ा विवाद है। यह बहस की जाती है कि छोटे किसानों की तुलना में कॉर्पोरेट के पास असंगत शक्ति और प्रभाव होता है। यदि आरंभ में कोई आकर्षक करार किया जाता है उसके पश्चात भी संबंध अनुचित लाभ उठाने वाले हो जाते हैं। आपका क्या विचार है ?

यह भय आलू उत्पादकों या जूते की फैक्ट्री में काम करने वाले मजदूरों के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। किन्तु फैक्ट्रियाँ बिना मजदूरों के चल नहीं सकती। यहाँ तक कि एकाधिकार भी कतिपय स्तर के बाद नहीं रहता है। अतः यह व्यर्थ का विषय है। कोई भी किसानों पर दबाव नहीं डाल रहा कि वे यह करार करें।

आगे भी एक बिन्दु है। वर्तमान भूमि कानून के अन्तर्गत कोई भी कारपोरेट कतिपय क्षेत्रफल से अधिक भूमि नहीं रख सकता। कारपोरेट उत्पादकों के समूह या एसोसिएशन से करार या कृषि संबंधी भागीदारी कर सकता है। बहुत से राज्यों में जैसे पश्चिम बंगाल में उनका मानना है कि कारपोरेट्स को व्यक्तिगत किसानों के साथ सम्पर्क नहीं बनाना चाहिए बल्कि उत्पादकों के समूह के साथ सम्पर्क बनाना चाहिए।

प्र. उपभोक्ता मूल्यों में किसानों का भाग प्रत्येक वर्ष कम होता जा रहा है। इस संबंध में क्या किया जा सकता है ?

मैंने एक पद्धति विकसित करने का प्रस्ताव रखा है जिसमें बड़े समूहों के लिए, जो वे अपना उत्पाद बेचकर भुगतान प्राप्त करते हैं वे उनके कुल भुगतान का कुछ भाग ही होता है। इसके पश्चात जैसे–जैसे उत्पाद के मूल्य बढ़ते हैं तो कुछ मात्रा में किसान को बोनस मिलता है जो इस बात पर निर्भर करता है कि उत्पाद कितना महँगा बिका।

RNI No. 831/1957
पोस्टल रजि० **DL (S)-18/3092/2009-11,**
पहले भुगतान किये बिना पोस्ट करने का लाइसेंस नं०
U (C) 92/2009-11
कालकाजी एचओ, नई दिल्ली-19, तारीख 4 एवं 5 अक्टूबर 2011

इस प्रकार अतिरिक्त प्रोत्साहन जो ग्रामीण क्षेत्रों से निर्यात के लिए दिया जाता है वह सारा उद्योग को न देकर किसानों को भी दिया जा सकता है। किन्तु यह तभी सम्भव है जब हम पता लगाएँ कि उत्पाद कहाँ से आता है और किस प्रकार सौदा किया गया। किसानों को उपभोक्ता मूल्य का कम भाग मिलने के कारणों में से एक कारण है कि किए जाने वाले सौदे पारदर्शी नहीं होते। यदि माल को दिल्ली में इलैक्ट्रोनिकली बेचा गया है तो हम जान सकते हैं कि इसका मूल्य कितना है और यह पता लगाना भी सम्भव होगा कि उपभोक्ता का पैसा कहाँ जा रहा है – कितना पैसा उत्पादक को, कूलिंग में, परिवहन में, कितना विक्रेता आदि ने दिया। अभी हमारे पास ऐसी पद्धति नहीं है।

पंजाब और हरियाणा में आढ़तियों की राजनीतिक अर्थव्यवस्था बहुत मजबूत है और सिस्टम के अन्तर्गत बिचौलियों को वैध रूप से नियुक्त किया जाता है। भारतीय खाद्य निगम द्वारा ली जाने वाली फसलों के मामले में किसानों को कोई हानि नहीं होती। इन राज्यों में आढ़तियों का कोई विरोध नहीं है।

आढ़तियों की भूमिका को हटाने, कम करने या नियंत्रण करने का एक मात्र रास्ता है कि सौदों में पारदर्शिता लाई जाए। आज जो हालात है जैसे आजादपुर मण्डी में कारोबार के लिए केवल 1500 लोगों को अनुमति है तो पद्धति के अन्तर्गत ही आढ़ती इनबिल्ट हैं उन्हें हटाने का एक ही रास्ता है कि आजादपुर मण्डी को ऑनलाइन किया जाए और पारदर्शी बनाया जाए।

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

भारत कृषक समाज अपने सदस्यों के विवरण को अद्यतन करने की प्रकिया में हैं। सदस्यों को अपना पूरा नाम, पता, टेलीफोन नंबर, ई-मेल आई.डी. यदि हो तो महासचिव, भारत कृषक समाज, ए-1, निजामुद्दीन वेस्ट, नई दिल्ली-110013 के पते पर भेजना आवश्यक है।

भारत कृषक समाज ए-1, निजामुदीन वेस्ट, नई दिल्ली- 110013, फोन: 011-46121708, 65650384, ई-मेल: contact@bks.org.in, वैबसाईट: www.bks.org.in के लिए श्री उरविन्द्र सिंह भाटिया द्वारा सम्पादित, मुद्रित व प्रकाशित तथा एवरेस्ट प्रेस, ई 49/8 ओखला इण्डस्ट्रीयल एरिया, फेस -2, नई दिल्ली -110020 द्वारा मुद्रित।